दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय दिया गया: 09 दिसंबर, 2009

रि.या.(सि.) 6758/2008

भाग सिंह ....याचिकाकर्ता

-बनाम-

दिल्ली उच्च न्यायालय .... प्रत्यर्थी

<u>इस मामले में प्रस्तुत हुए अधिवक्ताः</u>

याचिकाकर्ता हेतु : श्री सौरभ कृपाल, सुश्री अल्पना पोद्दार

प्रत्यर्थी हेतु : श्री राजीव बंसल

कोरमः-
माननीय न्यायमूर्ति बदर दुर्रेज़ अहमद
माननीय न्यायमूर्ति वीना बीरबल

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है?
2. रिपोर्टर को संदर्भित किया जाना है या नहीं?
3. क्या निर्णय की सूचना डाइजेस्ट में दी जानी चाहिए?

<u>न्या. वीणा बीरबल</u>

1. वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता ने दिनांक 12.03.2008 के आदेश को चुनौती दी, जिसके तहत उसे सेवा से हटाने की सजा अधिरोपित की गई।

2. संक्षेप में वर्तमान याचिका के निपटान हेतु प्रासंगिक तथ्य इस प्रकार हैं:-

याचिकाकर्ता 1999 से इस न्यायालय में कोर्ट अटेंडेंट के रूप में काम कर रहा था। मई, 2007 में, याचिकाकर्ता को श्री न्यायधीश जे.एम. मलिक (जैसा कि उनका आधिपत्य तब था) के न्यायालय में कोर्ट अटेंडेंट के रूप में पदस्थ किया गया। दिनांक 10.05.2007 को, याचिकाकर्ता को उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही के विचार में प्रत्यर्थी द्वारा जारी किए गए 10.05.2007 के निलंबन आदेश के माध्यम से निलंबित कर दिया गया। दिनांक 29.05.2007 को, याचिकाकर्ता को उसके विरुद्ध लगाये गए आरोप के अनुच्छेदों के संबंध में सी.सी.एस. (सी.सी.ए.) नियम, 1965 के नियम 14 के तहत जांच करने का प्रस्ताव रखने वाला एक ज्ञापन दिया गया, जो इस प्रकार हैः-

<u>"अनुच्छेद-I</u>

"कि माननीय न्यायमूर्ति जे.एम. मलिक के न्यायालय में काम करते समय स्थायी कोर्ट अटेंडेंट भाग सिंह ने अपने पद का दुरुपयोग करते हुए दिनांक 04.05.2007 को मनमोहन खन्ना से एक पर्ची प्राप्त की, जिसमें श्री के.एल. श्रॉफ बनाम नामित प्राधिकरण की न्यायिक फाइल को माननीय न्यायाधीश द्वारा इस न्यायालय की रिट शाखा से रि.या.(सि.) 2069/2004 में संदर्भ के लिए मांगा गया था।''

<u>अनुच्छेद-II</u>

"न्यायालय में पुनर्स्थापनाकर्ता श्री मनमोहन खन्ना द्वारा रि.या.(सि.) 2926/07 की न्यायिक फाइल की प्राप्ति के बाद स्थायी कोर्ट अटेंडेंट श्री भाग सिंह ने उक्त न्यायिक रिकॉर्ड का दूसरा सेट लिया और वह इसे अनधिकृत फोटोकॉपी के लिए कोर्ट हाउस से उच्च न्यायालय परिसर में निजी फोटोकॉपी की दुकान संख्या 7 में ले गया।"

<u>अनुच्छेद-III</u>

"कि श्री भाग सिंह, स्थायी कोर्ट अटेंडेंट ने उक्त न्यायिक अभिलेख प्राप्त किया और उच्च न्यायालय के नियमों और आदेशों, खंड-V और मूल पक्ष नियम-1967 में निहित वैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए उपरोक्त तरीके से इसे न्यायालय से बाहर ले गया।"

<u>अनुच्छेद-IV</u>

"कि श्री भाग सिंह, स्थायी कोर्ट अटेंडेंट ने रि.या. (सि.) 2926/07 की न्यायिक फाइल का रिकॉर्ड उसी की अनधिकृत फोटोकॉपी बनाने और उसे किसी तीसरे व्यक्ति यानी अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए एक अधिवक्ता के क्लर्क को देने के गुप्त उद्देश्य से प्राप्त किया।"

तदनुसार, उक्त श्री भाग सिंह, पुनर्स्थापनाकर्ता ने अपने उपरोक्त लोप एवं करण कृत्यों से बहुत गैर-जिम्मेदाराना तरीके से काम किया और अपने व्यक्तिगत लाभ हेतु अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग करने की कोशिश की और इस प्रकार सी.सी.एस. (आचरण) नियम, 1964 के नियम 3(1) का

उल्लंघन किया है और यह कि उसकी ओर से ऐसा आचरण इस न्यायालय के एक नियोक्ता के लिए अशोभनीय है।

यदि उपरोक्त आरोपों की पुष्टि की जाती है, तो कोर्ट अटेंडेंट श्री भाग सिंह इस न्यायालय के एक नियोक्ता के गंभीर दुराचार का दोषी होगा, जो सी.सी.एस. (सी.सी.एंड ए) नियम, 1965 के तहत अनुशासनात्मक कार्रवाई के लिए उत्तरदायी होगा।"

3. 4 अक्टूबर, 2007 को याचिकाकर्ता ने अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों पर अपना विस्तृत उत्तर प्रस्तुत किया। आरोप के अनुच्छेद I के उत्तर में याचिकाकर्ता ने कहा था कि उसने इस न्यायालय की रिट शाखा से न्यायालय के पुनर्स्थापक श्री मनमोहन खन्ना के माध्यम से के.एल. श्रॉफ बनाम नामित प्राधिकारी शीर्षक वाली रि.या.(सि.) 2069/2004 की फाइल मांगी थी, उसके एक रिश्तेदार के रूप में श्री अजय कोटनाला फ़ाइल से आदेश देखना चाहता था। उसने इस बात से इंकार किया कि फाइल की मांग इस बहाने से की गई थी कि माननीय न्यायाधीश द्वारा इसकी आवश्यकता थी। याचिकाकर्ता ने उत्तर में यह भी कहा कि न्यायिक फाइल में केवल एक सेट था और दूसरा कोई सेट नहीं था और न ही उसे सौदा करने वाले क्लर्क द्वारा भेजा गया था। याचिकाकर्ता द्वारा आरोपों के शेष अनुच्छेदों को विशेष रूप से अस्वीकार कर दिया गया था।

4. इस न्यायालय के रजिस्ट्रार(प्रशासन) के 24 जुलाई, 2007 के पत्र के माध्यम से, याचिकाकर्ता को सूचित किया गया कि सी.सी.एस.(सी.सी.ए.)

नियमों के नियम 14 के तहत याचिकाकर्ता के साथ-साथ न्यायालय के पुनर्स्थापनाकर्ता श्री मनमोहन खन्ना के विरुद्ध नियमित जांच करने का निर्देश दिया गया था और यह भी बताया गया था कि याचिकाकर्ता के साथ-साथ अन्य अधिकारी, अर्थात् मनमोहन खन्ना के विरुद्ध सामान्य कार्यवाही का आदेश दिया गया था। 2 अगस्त, 2007 के एक अन्य पत्र द्वारा, याचिकाकर्ता को सूचित किया गया कि इस न्यायालय के संयुक्त रजिस्ट्रार श्री जे.आर. आर्यन को अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा एक जांच प्राधिकरण के रूप में नियुक्त किया गया। याचिकाकर्ता ने जांच में भाग लिया जिसमें इस न्यायालय की ओर से सात साक्षियों से पूछताछ की गई और याचिकाकर्ता द्वारा बचाव पक्ष के साक्षियों के रूप में दो साक्षियों से पूछताछ की गई। जाँच के समापन पर, याचिकाकर्ता ने लिखित प्रस्तुतियाँ भी प्रस्तुत कीं। जाँच प्राधिकरण ने 5 दिसंबर, 2007 की अपनी रिपोर्ट में कहा कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोपों के सभी चार अनुच्छेदों को स्थापित कर लिया गया। न्यायालय ज्ञापन सं. 30956 ई-VIII/एस्टेट/डीएचसी/103 दिनांक 22.12.2007 के माध्यम से याचिकाकर्ता को दिनांक 5.12.2007 की जांच रिपोर्ट की एक प्रति प्रदान की गई थी। उसी ज्ञापन के माध्यम से याचिकाकर्ता को उसके विरुद्ध लगाये गए आरोप के अनुच्छेदों पर जांच प्राधिकरण द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों के विरुद्ध, यदि वह चाहता है, तो लिखित अभ्यावेदन या प्रस्तुति देने के लिए कहा गया था।

5. याचिकाकर्ता ने 5 दिसंबर, 2007 की जांच रिपोर्ट के विरुद्ध अभ्यावेदन दिया, जो 8 जनवरी, 2008 को प्रतिवादी के कार्यालय में प्राप्त हुआ। इसके बाद, 12 मार्च, 2008 के आक्षेपित आदेशों के माध्यम से, याचिकाकर्ता को सूचित किया गया कि इस न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति होने के नाते अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने 10 मार्च, 2008 से याचिकाकर्ता को सेवा से हटाने का निर्देश दिया है। याचिकाकर्ता ने उक्त आक्षेपित आदेश के विरुद्ध दया याचिका दायर की, जिसे अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने 23 मई, 2008 के आदेशों के माध्यम से अस्वीकार कर दिया। उसी के साथ व्यथित, याचिकाकर्ता ने वर्तमान रिट याचिका दायर की जिसमें दिनांक 12.3.2008 के आक्षेपित आदेश को अभिखंडित/अपास्त करने की प्रार्थना की गई है, जिसके तहत उस पर सेवा से हटाने की सजा और जांच रिपोर्ट और उसके अनुसरण में पारित सभी आदेश भी अधिरोपित किए गए हैं।

6. आरंभ में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता अपने विरुद्ध आरोपों के संबंध में जांच प्राधिकरण के निष्कर्ष को चुनौती नहीं दे रहा है। उसकी एकमात्र शिकायत यह है कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा उसे सेवा से हटाने की सजा बहुत कठोर और अत्यधिक है। यह तर्क दिया जाता है कि उसके विरुद्ध प्रमाणित दुराचार की प्रकृति को देखते हुए, सजा उच्च होती है।

7. आगे यह तर्क दिया गया कि अन्य सह-आरोपित अधिकारी, अर्थात् श्री मनमोहन खन्ना, पुनर्स्थापनाकर्ता को कम सजा दी जाती है, क्योंकि दिनांक 10.3.2008 के आदेश के अनुसार उसे इस न्यायालय की सेवाओं से "अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त" कर दिया गया था, लेकिन उसके बाद, उसने इस न्यायालय के समक्ष रि.या.(सि.) सं. 7160/2008 के रूप में एक याचिका दायर की, जिसमें अनुशासनात्मक प्राधिकरण के 10.3.2009 के आदेश को चुनौती दी गई थी, जिसमें प्रत्यर्थी को केवल सजा की मात्रा तक सीमित नोटिस जारी किया गया था। इस न्यायालय ने 2 दिसंबर, 2008 के अपने आदेश के माध्यम से मामले का प्रत्युत्तर दायर करने हेतु 16.02.2009 को स्थगित कर दिया और इस बीच सक्षम प्राधिकारी को इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सजा की मात्रा के पहलू पर विचार करने के लिए खुला छोड़ दिया कि न्यायालय के समक्ष प्रार्थना उक्त याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उस पहलू तक ही सीमित थी और किए गए अभ्यावेदन मामले की योग्यता सहित थे। इसके बाद, उक्त अधिकारी के उत्तर पर विचार करते हुए, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने दिनांक 16 मार्च, 2009 के आदेश के तहत सेवा से अनिवार्य सेवानिवृत्ति के दंड को घटाकर 2800 रुपए (पी.बी.-1)के ग्रेड ऑफ पे (वेतम ग्रेड) बैंड के साथ 5200-20200 रुपए के वेतन बैंड में तीन चरणों की कटौती की अर्थात 10 मार्च, 2008 को इस न्यायालय की सेवाओं में पुनर्स्थापनाकर्ता, श्री मनमोहन खन्ना, का पुनःस्थापन हुआ।

यह तर्क दिया जाता है कि सजा को कम करने के लिए वर्तमान रिट याचिका दायर करने से पहले याचिकाकर्ता द्वारा दायर दया याचिका को अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा खारिज कर दिया गया था। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान रिट याचिका विचाराधीन रहने के दौरान, याचिकाकर्ता ने फिर से उस पर लगाए गए जुर्माने की समीक्षा के लिए एक अभ्यावेदन किया था। हालाँकि, इसे अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा 14 अक्टूबर, 2009 के आदेशों के माध्यम से भी खारिज कर दिया गया है।

यह तर्क दिया गया कि सजा को कम करने के लिए वर्तमान रिट याचिका दायर करने से पहले याचिकाकर्ता द्वारा दायर दया याचिका को अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। आगे यह प्रस्तुत किया गया कि वर्तमान रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ता ने उस पर अध्यारोपित सजा के पुनर्विलोकन हेतु दोबारा अभ्यावेदन किया। यद्यपि, अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा 14 अक्टूबर 2009 के आदेश के माध्यम से इसे भी अस्वीकार कर दिया गया।

यह भी तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ता को दी गई सजा उसके विरुद्ध प्रमाणित आरोपों से असंगत है और यह विभेदकारी भी है और याचिकाकर्ता के निष्पक्ष और समान व्यवहार के अधिकार का उल्लंघन है क्योंकि ऊपर नामित अन्य सह-आरोपित अधिकारी को पहले कम सजा दी गई थी, यानी उसे अनिवार्य रूप से सेवा से सेवानिवृत्त कर दिया गया था। उसके अभ्यावेदन करने

पर अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा को घटाकर तीन चरणों में वेतन में कमी कर दिया गया है।

8. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि सह-आरोपित अधिकारी श्री मनमोहन खन्ना की भूमिका याचिकाकर्ता की तुलना में उतनी गंभीर नहीं है। यह तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ता न्यायिक फाइल के दूसरे सेट को गलत उद्देश्यों के लिए उसी फोटोकॉपी को प्राप्त करने के लिए न्यायालय परिसर से बाहर ले गया था। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध ऊपर बताए गए सभी चार आरोप उसके विरुद्ध प्रमाणित हो गए हैं। श्री मनमोहन खन्ना के मामले में, चार आरोपों में से केवल दो आरोप प्रमाणित हुए। पहला आरोप प्रमाणित हुआ कि न्यायाधीश द्वारा संबंधित फाइल की आवश्यकता के तथ्यों को सत्यापित किए बिना, उसने उसी की मांग के लिए एक पर्ची जारी की। उसके विरुद्ध प्रमाणित दूसरा आरोप यह है कि उसने न्यायाधीश के समक्ष फाइल नहीं रखी, जैसा कि उसने अनुरोध पर्ची में कहा था। अन्य दो आरोप हैं कि उसने न्यायिक रिकॉर्ड को हटाने में मदद की और याचिकाकर्ता को इसे अनधिकृत नकल के लिए दिया, यह उसके और याचिकाकर्ता के विरुद्ध संयुक्त रूप से आयोजित जांच कार्यवाही में स्थापित नहीं हुआ हैं।

यह तर्क दिया गया कि सह-आरोपित अधिकारी को कम सजा देना इस न्यायालय के हस्तक्षेप का आधार नहीं है। यह आगे तर्क दिया गया कि

याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रमाणित आरोपों पर विचार करते हुए, अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा दी गई सजा न तो अत्यधिक है और न ही इतनी असंगत है कि न्यायालय की अंतरात्मा को झटका लगे, इसलिए इस न्यायालय को इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। उसके तर्क के समर्थन में, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने (i) ***मेघालय राज्य और अन्य बनाम मेक्केन सिंह एन मराकः ए.आई.आर. 2008 एस. सी. 2862*** और (ii) ***अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, यूनाइटेड कमर्शियल बैंक और अन्य बनाम पी.सी.कक्कर : ए.आई.आर. 2003 एस.सी. 1571*** पर भरोसा किया।

9. हमने प्रस्तुतियों पर विचार किया और अभिलिखित सामग्री का अवलोकन किया। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, याचिकाकर्ता ने अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों के संबंध में जांच प्राधिकरण के निष्कर्षों को चुनौती नहीं दी है। हालांकि, यह पता लगाने के लिए कि क्या निष्पक्ष और उचित आदेश की जांच की गई है, हमने आदेश के दौरान जांचे गए साक्षियों के बयान, जाँच रिपोर्ट आदि सहित जाँच कार्यवाही का अध्ययन किया है। जाँच प्राधिकरण द्वारा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया गया है। याचिकाकर्ता को जाँच कार्यवाही में भाग लेने का पूरा अवसर दिया गया है। उसकी विभाग के साक्षियों से प्रति-परीक्षा की गई और दो बचाव साक्षियों को प्रस्तुत करके बचाव पक्ष के साक्ष्य का भी नेतृत्व किया है। याचिका में जिस आधार पर जाँच रिपोर्ट के निष्कर्ष को चुनौती दी गई है, वह यह है कि बचाव पक्ष के साक्षियों के

साक्ष्य को जाँच प्राधिकरण के साथ-साथ अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया था। यह ध्यान दिया जा सकता है कि जाँच प्राधिकरण के साथ-साथ अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने बचाव पक्ष के साक्षियों के बयानों पर विचार किया है और उसे विश्वसनीय नहीं पाया है। इसका अध्ययन करने के बाद हमारा मानना है कि इसे सही तरीके से अस्वीकार कर दिया गया है। अभिलिखित तथ्य को ध्यान में रखते हुए, याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप संतोषजनक रूप से प्रमाणित होते हैं।

10. जहाँ तक सह-आरोपित अधिकारी मनमोहन खन्ना के समान व्यवहार करने में याचिकाकर्ता के तर्क का संबंध है, ***बलबीर चंद बनाम भारतीय खाद्य निगम : (1997) 2 एलएलजे 879 एस.सी.*** में यह अभिनिर्धारित किया गया, कि भले ही किसी सह-अपराधी को कम सजा दी जाए, लेकिन यह हस्तक्षेप का आधार नहीं हो सकता। किसी भी स्थिति में, याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रमाणित आरोपों पर विचार करते हुए, वह सह- आरोपित अधिकारी के साथ समानता का दावा नहीं कर सकता। याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रमाणित आरोप अधिक गंभीर प्रकृति के हैं। उनके विरुद्ध प्रमाणित आरोपों के अनुसार, याचिकाकर्ता व्यक्तिगत लाभ के लिए इसकी अनधिकृत प्रतिलिपि बनाने के लिए न्यायिक रिकॉर्ड को एक निजी फोटोकॉपीयर के पास ले गया। न्यायालयी फाइल फोटोकॉपीयर की दुकान से भी मिली थी। याचिकाकर्ता एक स्थायी कोर्ट अटेंडेंट होने के नाते क़ानूनी प्रावधानों और नियमों से अवगत था कि न्यायिक रिकॉर्ड

का कोई भी भाग अनुमति/अनुमोदन के बिना न्यायालय भवन/परिसर से बाहर नहीं लाया जाना चाहिए था। एक कोर्ट अटेंडेंट महत्वपूर्ण फाइलों को न्यायालय से रजिस्ट्री के साथ-साथ संबंधित शाखा और इसके विपरीत ले जाता है। फाइल को न्यायालय के बाहर ले जाने से उसने नियोक्ता का विश्वास और आस्था खो दी। याचिकाकर्ता गंभीर दुराचार का दोषी है। सह-आरोपित अधिकारी मनमोहन खन्ना के विरुद्ध प्रमाणित आरोप यह हैं कि याचिकाकर्ता द्वारा बताए गए तथ्यों को सत्यापित किए बिना कि फाइल की आवश्यकता माननीय न्यायाधीश को थी, उसने फाइल की मांग के लिए एक पर्ची जारी की और फाइल प्राप्त होने के बाद, उसने इसे माननीय न्यायाधीश के समक्ष नहीं रखा। उसका मामला यह है कि इस सद्भाविक विश्वास के तहत कि न्यायाधीश द्वारा न्यायिक फाइल की मांग की गई थी, उसने याचिकाकर्ता के माध्यम से इसकी मांग की थी। उसे इस आरोप से वियुक्त कर दिया गया कि उसने याचिकाकर्ता को इसकी अनधिकृत नकल के लिए न्यायिक रिकॉर्ड दिया था। उसे इस आरोप से भी वियुक्त कर दिया गया कि उसने न्यायिक रिकॉर्ड को हटाने में मदद की थी। याचिकाकर्ता सजा के संबंध में उसके साथ समानता का दावा नहीं कर सकता। इस संबंध में उठाए गए तर्क को अस्वीकार कर दिया जाता है।

11. दूसरा तर्क यह है कि सेवा से हटाने की सजा अत्यधिक है और इसे कम किया जाना चाहिए। अब यह सु-स्थापित है कि उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए सजा की मात्रा

में तब तक हस्तक्षेप नहीं करता जब तक कि इसके पर्याप्त कारण मौजूद न हों। अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा दी गई सजा, जब तक कि न्यायालय की अंतरात्मा के लिए चौंकाने वाली न हो, न्यायिक समीक्षा के अधीन नहीं की जा सकती क्योंकि ***मेघालय राज्य बनाम मेक्कर सिंह एन मराक (उपरोक्त)*** में अभिनिर्धारित किया गया है।

12. ***अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, यूनाइटेड कमर्शियल बैंक और अन्य बनाम पी. सी. कक्कड़ (उपरोक्त)*** में उच्च न्यायालय द्वारा सजा की मात्रा में हस्तक्षेप की गुंजाइश पर विचार किया गया है। यह अभिनिर्धारित किया गया कि उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की मांग तब तक नहीं की जाती जब तक कि सजा इतनी आश्चर्यजनक रूप से असंगत न हो कि न्यायालय की अंतरात्मा को झटका लगे। उक्त मामले में उपरोक्त संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर चर्चा की गई है। उसी पर चर्चा करने के बाद, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया-

> ".....न्यायालय को प्रशासक के निर्णय में तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि यह अतार्किक न हो या प्रक्रियात्मक अनुचितता से ग्रस्त न हो या न्यायालय की अंतरात्मा के लिए चौंकाने वाला न हो, इस अर्थ में कि यह तर्क या नैतिक मानकों की अवज्ञा था। वेड्सबरी के मामले (उपरोक्त) में जो कहा गया है, उसे ध्यान में रखते हुए न्यायालय प्रशासक द्वारा किए गए चयन की शुद्धता पर विचार नहीं करेगा और न्यायालय को अपने निर्णय को प्रशासक के निर्णय से

प्रतिस्थापित नहीं करना चाहिए। न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया में कमी तक सीमित है न कि निर्णय तक।"

13. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, सह-अधिकारी श्री मनमोहन खन्ना की तुलना में याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रमाणित आरोप गंभीर प्रकृति के हैं। दो बार, याचिकाकर्ता ने सजा कम करने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकरण को अभ्यावेदन दिया है और दोनों बार ही, उसे अस्वीकार कर दिया गया। याचिकाकर्ता ने गंभीर कदाचार किया है। उसने उच्च न्यायालय द्वारा उन पर व्यक्त विश्वास खो दिया। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, याचिकाकर्ता को दी गई सजा में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

याचिका खारिज की जाती है। जुर्माने के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया गया।

न्या. वीना बीरबल

न्या. बदर दुर्रेज़ अहमद

9 दिसंबर, 2009
एसएसबी

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*